उचित शस्य क्रियाएं अपनाकर मक्का का अधिक उत्पादन लेवें

मक्का की राष्ट्रीय औसत उपज 1515 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर से कम है अतः किसान भाई उपयुक्त प्रजाति का चुनाव करके व उन्नत कृषि तकनीकियों का उपयोग कर अपनी उपज व उत्पादकता में वृध्दि कर सकते है।

खेत की तैयारी- खेत की तैयारी जून के प्रथम सप्ताह में कर लेनी चाहिए यदि गोबर की खाद का प्रयोग करना हो तो इसे अन्तिम जुताई के समय जमीन में मिलाते जायें, लेकिन यह ध्यान रखें कि गोबर की खाद पूर्ण रुप से सड़ी हुई होनी चाहिए।

उपयुक्त जातियां- मक्का की खेती, अधिकांशतः वर्षा आधारित क्षेत्रों में की जाती है इसलिए बोआई के लिए जल्दी पकने वाली व सूखारोधी किस्मों का चयन करना चाहिए. देशी किस्मों के अतिरिक्त मक्का में संकर तथा कम्पोजिट (संकुल) किस्म प्रचलित है. संकर जाति का बीज हर साल नया लेना होगा, जबकि कम्पोडिट जाति का बीज के रुप में तीन चार वर्ष तक उपयोग में ला सकते हैं.

उपयुक्त जातियां इस प्रकार हैं-

देशी किस्में- श्वेता, माही कंचन, दुधमोगरा, साठी थे किस्में 75-80 दिनों में पक जाती है तथा सूखारोधी किस्मों के दानों का रंग सफेद होता है.

कम्पोजिट किस्में- जवाहर मक्का-8 जवाह मक्का-12, एन.एल.डी. ये किस्में 85-90 दिनों में पककर तैयार हो जाती है. दानों का रंग सफेद होता है.

संकर किस्म- गंगा सफेद-2, यह 105 से 110 दिनों में तैयार हो जाती है, दानों का रंग सफेद होता है, यह केवल सिंचित क्षेत्रों के लिये उपयुक्त है।

बीज दर- 18 से 20 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टर के लिये पर्याप्त होती है।

बीजोपचार- बीज को बोने से पूर्व किसी फफूंदनाशक दवा जैसे थायरम या एग्रीसन जी.एन. की ढाई से तीन ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिये.

बीज की बोआई- बोआई 15 से 30 जून के बीच करनी चाहिए, जब वर्षा प्रारंभ हो जो और मिट्टी में अंकुरण के लायक नमी हो तो बोआई कर देनी चाहिए देरी से बोआई करने पर उपज में कमी आंकी गयी.

बोआई का तरीका- मक्का की खेती समतल तथा ढालू दोनों भूमियों पर की जाती है, इसलिए ढालू भूमियों पर ढाल के विपरीत दिशा में देशी हल से जुताई करें तथा तैयार मेड़ के किनारे पर खाद देकर बीज की चोपाई मेड़ के ऊपर 3 से 5 से.मी. की गहराई पर करें, इससे पानी का बहाव कम होने के साथ-साथ मिट्टी का कटाव रुकेगा तथा नमी भी संरक्षित होगी. समतल जमीन में कतारों में सरिता अथवा दुफन व्दारा बीच बोयें तथा बोआई के एक माह पश्चात मिट्टी चढ़ाने का कार्य करें.

कतार एवं पौधों की दूरी- कतार से कतार की दूरी 60 से.मी. तथा पौधों से पौधों की दूरी 20-25 सेमी. रखना चाहिए जिससे प्रति हेक्टर पौधों की संख्या 70-80 हजार हो जायें.

सिंचाई- फसल, बढ़वार की निम्न अवस्थाओं में पानी के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होता है.

1. पौध अवस्था (बोआई 25-30 दिनों बाद)

2. नर मंजरी निकलते समय (बुआई के 50-55 दिनों बाद)

3. भुट्टा बनते समय (बोआई के 70 से 75 दिनों बाद) यदि सिंचाई की उपलब्धता हो तो उपरोक्त अवस्थाओं में नमी की कमी होने पर सिंचाई अवश्य करें.

खाद एवं उर्वरकों की मात्राः- मक्का क खाधान्न फसल है इसलिये इसको पोषक तत्वों की अधिक मात्रा की आवश्यकता पड़ती है मक्का अनुसंधान केन्द्र (ज. ने.कृ.वि.वि.) छिंदवाड़ा वादारा किये गये अनुसंधान के अनुसार रसायनिक खादों की मात्रा निम्न प्रकार से देना चाहिए.

रसायनिक खाद देने की विधिः-

नत्रजनः- सभी किस्मों में नत्रजन का एक तिहाई भाग आधार खाद के रुप में बोआई के समय ही देना चाहिए तथा बचे हुई नत्रजन की मात्रा को पुनः दो भागों में देना चाहिए, प्रथम भाग घुटने तक ऊंचाई वाले मक्का में पौधों के पास (साइड ड्रेसिंग) डाले, तथा दूसरा भाग नर फूल (मांजर) आने के पहले दिया जावे.

फास्फोरस एवं पोटाश- फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय हल के पीछ चोंगा या नाई लगाकर बीज के 5 से.मी. नीचे डालना चाहिये. चूंकि मिट्टी में फास्फोरस एवं पोटाश की गतिशीलता कम होती है अतः इसका निवेशन ऐसी जगह करना आवश्यक होता है दहां पौधों की जडें हो. इन उर्वरकों को मिट्टी की सतह पर छिड़क देने से संपूर्ण उर्वरक मिट्टी के संपर्क में आने से अविलेय तो ही हो जाता है, साथ ही अचल स्वभाव के कारण पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाता.

जस्ते की कमी वाले क्षेत्र में जिंक सल्फेट 25 किलोग्राम प्रति हेक्टर की दर से बोआई के समय डाल देना चाहिये. अगर खड़ी फसल में जस्ते की कमी के लक्षम दिख रहें हो तो जिंक सल्फेट 0.5 प्रतिशत घोल बनाकर खड़ी फसल में छिड़काव करें.

निंदाई- गुड़ाई- बोआई के 20-25 दिन बाद दो पंक्तियों के बीच खुरपी से निंदाई गुड़ाई करें या फिर डोरा चलाकर फसल को खरपतवारों से मुक्त रखें.

रसायनिक नींदा नियंत्रण- एट्राजीन (एट्राटाफ) दवा 1 से 1.5 कि.ग्रा. की 800 से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर स बुआई के तुरंत बाद अंकुरण के पूर्व छिड़काव करें. दलहन या तिलहन मिश्रित मक्का की फसल में अट्राजीन का प्रयोग नहीं करना चाहिए. मिश्रित फसल में पेण्डीमिथालीन या मेटालाक्लोर 1 कि.ग्रा. बोआई के बाद अंकुरण पूर्व प्रयोग करें.

मक्का के साथ अन्तरवर्तीय फसलेंः-

मक्का की फसल एकल (अकेला) न उगाकर मक्का के साथ अल्प अवधि वाली दलहनी फसलें जैसे उड़द या बरबटी या तिलहनी जैसे सोयाबीन की अन्तःशस्य करें.

इसके लिये मक्का की पौध संख्या सामान्य बुआई (65 हदार से 75 हजार तक) के बराबर ही रखें.

खरीफ में यदि कपास की फसल लेना हो तो कपास की दो पंक्ति के बीच मक्का की एक पंक्ति ले सकते हैं. क्योंकि कपास में पंक्ति से पंक्ति की दूरी अधिक रखते हैं.

इस प्रकार वर्षा आधारित क्षेत्रों मे जहां पर खरीफ के बाद रबी में दूसरी फसल लेना संभव नहीं हो पाता।

- बीरबल साहू

गाय-भैंस के नस्लों की पहचान जरुरी

हमारे देश में दुग्ध उत्पादन का औद्योगीकरण होने से अब अधिकांश पशुपालक उच्च दुग्ध उत्पादन क्षमता की गाय एवं भैंसों के क्रय को प्राथमिकता देने लगे हैं। इस स्थिति में उच्च उत्पादन क्षमता के पशुओं के चयन का कार्य अति महत्वपूर्ण हो गया है। एक अच्छे एवं प्रगतिशील पशुपालक के लिए यह आवश्यक है कि उसे विभिन्न गाय-भैंस की नस्लों की पर्याप्त जानकारी व पहचान हो।

गाय की प्रमुख नस्लें

भारतीय नस्लें – हमारे देश में मुख्य रूप से निम्न दुधारू गो नस्ले पाई जाती है।

साहीवाल – (मूल स्थान) मोण्टगोमरी (पाकिस्तान) पंजाब का पाकिस्तान सीमावर्ती भू-भाग।

पहचान – यह भारत की सर्वोत्तम दुधारू नस्ल है। इसका रंग बदामी, आंखे छोटी, चमड़ी ढीली एवं लटकी हुई, भारी-भरकम शरीर, बड़ा कुकुद (हम्प), मध्यम आकार के कान, लम्बी गल कम्बल (ड्यूलेप) मूतान ढीला, अयन बड़ा तथा झुर्रीदार, सींग छोटे, माथा चौड़ा, लम्बी लटकती हुई पूंछ। मादा का औसत वजन 400 कि.ग्रा. तथा सांड का औसत वजन 500 कि.ग्रा. होता है। इनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता 6 से 10 लीटर प्रतिदिन तथा 1500-2500 लीटर प्रति ब्यांत होती है। मेरठ प्रक्षेत्र पर एक गाय का अधिकतम उत्पादन 45 लीटर प्रतिदिन तक रिकार्ड हुआ है। तथा एक ब्यांत में उसका उत्पादन 5800 लीटर तक होता है। इस नस्ल की गाय का औसत दुग्ध काल 800 दिनों का होता है। प्रथम ब्यांत की आयु लगभग साढ़े तीन वर्ष तथा ब्यांत अंतराल 15-16 माह का होता है। दूध में वसा का प्रतिशत 4.5 प्रतिशत होता है। रोग प्रतिरोधक एवं विभिन्न जलवायु के प्रति अनुकूलन क्षमता उत्तम होती है।

प्राप्ति स्थान – पंजाब प्रांत के अतिरिक्त यह नस्ल शासकीय प्रजनन प्रक्षेत्र, अंजोर, दुर्ग (छत्तीसगढ़), राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा), मेरठ (उ.प्र.), चाक गंजरिया, लखनऊ (उ.प्र.) तथा हिसार (हरियाणा) में पाली जा सकती है।

लालसिंधी – (मूल स्थान) सिंध (पाकिस्तान) करांची तथा हैदराबा।

पहचान – यह भी एक उत्तम दुधारू नस्ल है। दुग्ध उत्पादन क्षमता में साहीवल के बाद इसका ही क्रम आता है। शरीर का रंग लाल होता है। यह नस्ल साहीवाल से मिलती-जुलती है, लेकिन इसका आकार साहीवाल गाय की अपेक्षा छोटा होता है। दुग्ध उत्पादन 1500 से 1000 लीटर प्रति ब्यांत तथा दुग्ध काल 280-300 दिनों का होता है। प्रथम ब्यांत की आयु लगभग 3 वर्ष तथा ब्यांत का अंतराल लगभग 15 माह का होता है। दूध में वसा 4.5 प्रतिशत होती है।

प्राप्ति स्थान – भारत में पंजाब के सीमावर्ती क्षेत्रों में यह नस्ल पाई जाती है।

गिर – (मूल स्थान) कठियावाड़ा (गुजरात)

पहचान – इसका कद मध्यम, रंग लाल अथवा लाल के ऊपर सफेद धब्बे पाए जाते है। कान लम्बे एवं नीचे की ओर लटकते रहते है। माथा बहुत चौड़ा एवं सींग का विन्यास विशेष प्रकार का होता है। मादा का वजन 400-500 कि.ग्रा. एवं सांड का वजन 550-600 कि.ग्रा. तक होता है। औसत दुग्ध उत्पादन 1700 लीटर प्रति ब्यांत के लगभग होता है। इसकी अधिकतम दुग्ध उत्पादन क्षमता 3200 लीटर प्रति ब्यांत तक रिकार्ड की गई है।

प्राप्ति स्थान – शुद्ध रूप से पूर्ण सौराष्ट्र तथा मुंबई और राजस्थान के सीमावर्ती क्षेत्रों एवं मिश्रित नस्ल के रूप में पश्चिमी राजस्थान, बड़ोदा एवं मुबंई के दक्षिण भाग में पाई जाती है। यह शासकीय प्रक्षेत्र, जूनागढ़ (गुजरात) में भी पाली जा रही है।

थारपारकर – (मूल स्थान) पाकिस्तान का सिंध प्रांत का थारपारकर नामक क्षेत्र।

पहचान – मध्यम कद, रंग सफेद अथवा धूसर मादा एवं सांड का वजन गिर के समान होता है। यह दोहरी उपयोगिता वाली नस्ल है। गायों की दुग्ध उत्पादन क्षमता भी उत्तम होती है तथा बैल भी काफी उत्पादन क्षमता 2000 लीटर प्रति ब्यांत होता हैं एवं वसा 4.5 प्रतिशत तक पाई जाती है। प्रथम ब्यांत की आयु ढाई से तीन वर्ष तक ब्यांत अंतराल 15 माह का होता है। कुछ गायों में दुग्ध उत्पादन 4500 कि.ग्रा. प्रति ब्यांत तक भी रिकार्ड किया गया है।

प्राप्ति स्थान – कच्छ तथा भार मरूस्थ, जोधपुर तथा जैसलमेर जिले।

कांकरेज – (मूल स्थन) उत्तरी गुजरात।

पहचान – भारतीय नस्लो में सबसे भारी, धूसर (सिम्बर ग्रे अथवा आगरू में) अथवा काला, सींगों का विन्यास विशेष प्रकार का होता है एवं सींग बहुत भारी होते हैं। औसत दुग्ध उत्पादन क्षमता 1350 कि.ग्रा. प्रति ब्यांत होती है।

प्राप्ति स्थान – गुजरात के कई जिलों में इस नस्ल के पशु पाले जाते हैं।

हरियाणा (मूल स्थान) हरियाणा प्रांत के विभिन्न जिले, रोहतक, हिसार, करनाल, गड़गांव

पहचान – यह दोहरी उपयोगिता वाली सबसे अधिक लोकप्रिय नस्ल है। इसका रंग सामान्यतः सफेद तथा हल्का भूरा, कद ऊंचा, सींग गुट्टल, चहेरा पतला व लम्बा मस्तक चपटा, चुस्त, छोटे व नुकीले कान, उठा हुआ टाड (हम्प) बड़ी तथा चमकीली आंखें, खुर काले तथा लटकते हुए पूंछ के बाल, खिंचा हुआ मुनान होता है। इस नस्ल की मादा गायों का औसत वजन 350 कि.ग्रा. तथा सांडों का औसत भार 500 किग्रा तक होता है।

गायों का औसत दुग्ध उत्पादन 4-5 लीटर प्रतिदिन तथा प्रति ब्यांत का औसत उत्पादन 900 से 1200 लीटर होता है। इस नस्ल के बैल कृषि कार्य करने तथा भार ढोने में बड़े चुस्त व फुर्तीले होते हैं।

प्राप्ति स्थान – उपरोक्त दर्शाये मूल स्थान के अतिरिक्त यह नस्ल दिल्ली, उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र तथा राजस्थान के जयपुर, जोधपुर तथा भरतपुर के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुतायत में देखने का मिलती है।

देवनी – (मूल स्थान) आंध्रप्रदेश के उत्तर पश्चिम एवं पश्चिम भाग।

पहचान – शारीरिक लक्षण गिर नस्ल से मिलते-जुलते हैं, लेकिन रंग चितकबरा होता है। शरीर पर काले सफेद धब्बे पाये जाते हैं। औसत दुग्ध उत्पादन 1200 लीटर प्रति ब्यांत है। यह भी दोहरी उपयोगिता वाली नस्ल है।

प्राप्ति स्थान – आंध्रप्रदेश के उत्तर पश्चिम एवं पश्चिमी भाग गायों का औसत दुग्ध उत्पादन 4-5 लीटर प्रतिदिन तथा प्रति ब्यांत का औसत उत्पादन 900 से 1200 लीटर होता है। इस नस्ल के बैल कृषि कार्य करने तथा भार ढोने में बड़े चुस्त व फुर्तीले होते हैं।

प्राप्ति स्थान – उपरोक्त दर्शाये मूल स्थान के अतिरिक्त यह नस्ल दिल्ली, उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र तथा राजस्थान के जयपुर, जोधपुर तथा भरतपुर के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुतायत में देखने को मिलती है।

देवनी – (मूल स्थान) आंध्रप्रदेश के उत्तर पश्चिम एवं पश्चिमी भाग।

पहचान – शारीरिक लक्षण गिर नस्ल से मिलते-जुलते हैं, लेकिन रंग चितकबरा होता है। शरीर पर काले सफेद धब्बे पाये जाते हैं। औसत दुग्ध उत्पादन 1200 लीटर प्रति ब्यांत है। यह भी दोहरी उपयोगिता वाली नस्ल है।

प्राप्ति स्थान – आंध्रप्रदेश के उत्तर पश्चिम एवं पश्चिमी भाग।

विदेशी गाय की प्रमुख नस्लें – दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से विदेशों में जो गाये पाली जाती हैं, उनकी प्रमुख नस्लों के मूल स्थान शरीर का औसत भार, शारीकिर गुण एवं उत्पादन क्षमता निम्नानुसार है।

उपरोक्त नस्लों में से भारत में होलस्टिन फ्रीजियन तथा जर्सी नस्ले दुग्ध उत्पादन में उपयुक्त मानी गई है। इन नस्लों की गायों के दूध में वसा की मात्रा भारतीय मूल की गायों की तुलना में कम होती है। देश की पशु प्रजनन नीति में केवल इन्हीं दोनों नस्लों को चयनित किया गया है। इन्हीं के सांडों से देश में संकर प्रजनन को बढ़ावा दिया जा रहा है। अतः इन्हीं दो नस्लों की पहचान संबंधी गुणों का संक्षिप्त उल्लेख किया जा रहा है।

होम्सटीन

फ्रीजियन – यह गाय सफेद काले रंग की धब्बेदार होती है। सफेद रंग पर काले धब्बे से लेकर पूर्णतया काले रंग की यह गायें पाई जाती है। पूंछ का निचला हिस्सा सदैव सफेद होता है। इनका शरीर बड़ा होता है चारा खाने की क्षमता अधिक होती है। सिर बड़ा, पतला एवं सीधा होता है। इस नस्ल की गायें शांत एवं सीधी होती है। सांड शरारती होते हैं। इसके दूध में वसा कम होती है, लेकिन दुग्ध उत्पादन सभी विदेशी तथा देशी गाय की नस्लों की तुलना में सर्वाधित होता है।

जर्सी – इस नस्ल के पशु का रंग हल्के लाल रंग, काला एवं सफेद धब्बेदार भी होता है। पूंछ का निचला हिस्सा काला एवं सफेद होता है। थूथन काली होती है। पीठ सीधी, चौड़ें पुट्ठे एवं ऊंचा स्कन्ध प्रदेश इस नस्ल के मुख्य पहचान चिह्न है। जर्सी गायों के दूध में वसा अन्य विदेशी नस्लों की अपेक्षा अधिक होती है।

भैंस की नस्लें – हमारे देश में प्रमुख रूप से भैंसों को 9 नस्लें पाई जाती है।

1- मुर्रा, 2 - भरावरी, 3- नीली, 4- रावी, 5- सूरती, 6 - मेहसाना, 7- जाफराबादी, 8 - नागपुरी एवं 9 - तराई।

भैंस की उक्त नस्लों में क्र. 1 से 7 तक की प्रजातियां ही भारत सरकार द्वारा अनुमोदित की गई है। इन नस्लों में मुर्रा तथा भदावरी नस्लों का विशेष महत्व है। अतः इनकी पहचान का उल्लेख किया जा रहा है।

मुर्रा – (मूल स्थान) हरियाणा प्रदेश के रोहतक, हिसार, करनाल एवं पश्चिमी क्षेत्र तथा पंजाब।

पहचान – छल्लेदार मुड़े एवं छोटे सींग, लम्बी पूंछ, बड़ा शरीर, विकसित अयन, चौड़े नितम्ब, ढलवां पुट्ठे तथा अधिक दूध उत्पादन करना आदि इस नस्ल की प्रमुख विशेषताएं हैं। इनका रंग गहरा काला, पूंछ तथा माथे पर सफेद धब्बे भी इस नस्ल का औसत उत्पादन 6-7 लीटर प्रतिदिन तथा दूध उत्पादन क्षमता 1500-2000 लीटर प्रति ब्यांत होता है। इस नस्ल की भैंस का अधिकतम दैनिक दुग्ध उत्पादन 18-20 लीटर तथा अधिकतम ब्यांत का औसत दुग्ध उत्पादन 4000-5000 लीटर तक रिकार्ड किया गया है।

प्राप्ति स्थान – हरियाणा के विभिन्न जिलों के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश के मेरठ, बुलंदशहर, मुजफ्फरनगर, रामपुर, मुरादाबाद, गरियाबाद, बरेली में शुद्ध मुर्रा नस्ल के पशु प्रचुर संख्या में देखे जाते हैं। हरियाणा में सिरसा तथा हिसार, उत्तर प्रदेश में मथुरा के शासकीय पशुधन प्रक्षेत्र में इस नस्ल को संक्षित रखा गया है। पंजाब के सभी जिलों में मुर्रा नस्ल बहुतायत में उलब्ध है।

भदावरी : (मूल स्थान) उत्तर प्रदेश के इटावा व आगरा तथा मध्यप्रदेश ग्वालियर जिले में इस नस्ल की शुद्ध भैंसे प्रचुर संख्या में देखी जा सकती है।

पहचान – आकार मध्यम, छोटा शरीर, त्रिकोणीय आकार का छोटा सिर, छोटी तथा मजबूत टांगे, काले खुर, तलवार के समान चपेट तथा लम्बे सींग, काली व सफेद गुच्छेदार पूंछ, रंग ताबें जैसा शरीर पर लाली लिए हुए बादामी रंग के छोटे-छोटे तथा कम संख्या में बाल, अयन पर उभरी हुए दुग्ध शिकाएं आदि इस नस्ल की प्रमुख विशेषताएं हैं। अधिकाशं पशुओं के गले पर दो सफेद धारियां होती हैं, जिन्हें किसान जनेऊ की संज्ञा देते हैं। गांवों में इस नस्ल की पहचान में इस जनेऊ को बहुत महत्व दिया जाता है। इस नस्ल का औसत दुग्ध उत्पादन 5 लीटर प्रतिदिन का होता है।

इसके दूध में वसा 7 से 10 प्रतिशत पाई जाती है। इस नस्ल की भैंसों के दूध में अधिकतम वसा 13 प्रतिशत देखी गई है। अतः घी उत्पादन की दृष्टि से यह नस्ल सबसे उत्तम है।

प्राप्ति स्थान –उत्तर प्रदेश एवं मध्य प्रदेश के उपरोक्त जिलों से इस नस्ल की भैंसे खरीदी जा सकती है। दुधारू पशु का चुनाव करते समय उनकी नस्ल की पहचान के अतिरिक्त अन्य बिन्दुओं जैसे शारीरिक बनावट, अयन (अगला हिस्सा पुष्ट, वृहद, पिछला हिस्सा चौड़ा, शरीर से अच्छी तरह से जुड़ा हुआ, मुलायम, दुग्ध शिराएं पूर्ण रूप से विकसित) धान (चारों थनों की लम्बाई, व्यास एवं दूरी समान) का आकार, दुग्ध उत्पादन का परीक्षण (तीन समय के दुग्ध उत्पादन का औसत), उम्र (सींग पर उभरे घेरों एवं दांतों द्वारा) पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके अलावा यह भी देखना चाहिए कि पशु पूर्ण रूप से स्वस्थ हो। पशु क्रय करते वक्त यदि पशु पालक भाई उपरोक्त सभी बातों पर ध्यान देंगे तो निश्चित रूप से दुग्ध उत्पादन व्यवसाय से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

-डॉ. आर के जैन